भगवत् कृपा

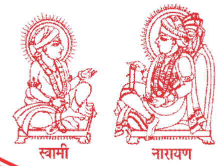

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-1, अंक-6, 7	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-10.00
सोमवार, 1 नवम्बर' 77	मानद सहसम्पादक: श्री महेन्द्र दवे-श्री विमल दवे	प्रति अंक : 1.00

कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी

समाधि प्रकरण और सद्गुरु मुक्तानंदस्वामी

सहजानंदस्वामिजी ने जो यह समाधिप्रकरण चलाया इसके पीछे उनका उद्देश्य चमत्कार कर के लोगों को अपने सम्प्रदाय में लाने का निश्चित् नहीं था, किन्तु जीवों को अपने असली स्वरुप का दर्शन करवाने का—स्वरूपानुसंधान करवाने का था। सद्गुरु मुक्तानंदस्वामी को प्रारम्भ में महाराज के स्वरूप का यथार्थ निश्चय नहीं था और इन्होंने तो ऐसा निर्णय कर लिया था कि राधा-लक्ष्मी नूपुर पहन कर बैठे हों और उनके साथ स्वयं भगवान चतुर्भुज रूप में दर्शन दें तब भी रामानंदस्वामी के अतिरिक्त किसी अन्य को परमात्मा के रूप में स्वीकृत नहीं करना। अब उनके सुनने में यह बात आई की महाराज सब को समाधि करवाते हैं और उनके दर्शनमात्र से सबके प्राण आकर्षित होते हैं। उस वक्त वे कच्छ में थे। उनकी समझ में नहीं आया कि इतनी आसानी से समाधि कैसे हो सकती है? इनको लगा कि यह चमत्कार है, पाखंड है और सत्संग के प्रति उनको अति ममत्व और आत्मबुद्धि होने के कारण वे व्याकुल हो उठे कि हमारे सत्संग में ये जादू-टोने क्यों? उन्होंने यह समाधि के बारे में विरोध प्रकट किया और जब सहजानंदस्वामी मेघपुर में आये तब एकान्त में बुला कर इन्होंने महाराज को उपलाभ्य भी दिया कि ये सब क्यों करते हो?

किन्तु इसके बाद तुरन्त 'कालवानी' गांव में स्वयं रामानंदस्वामी ने मुक्तानंदस्वामी को दर्शन दिया और कहा कि—'मैंने क्या कहा था? मैं तो बाजा बजाने वाला हूं, वेशभूषा धारण करने वाला तो अब आयेगा—वह ही यह महाराज है। यह हम सब के इष्टदेव हैं और यह जो समाधि करवाते हैं यह चमत्कार नहीं है, इस में सच्चाई है और उद्देश्य जीवों के कल्याण का है।' यह सुनकर मुक्तानंदस्वामी के संशय का छेद हो गया और इनके अन्तर में आनंद के फव्वारे उड़ने लगे। उसी अवस्था में उन्होंने लिखा है—

'भ्रमणा भांगी रे हो हैयानी,
बात केने नथी रे हो कहयानी,
बीती होयते रे हो जाणे।'

अर्थात्—मेरे हृदय के भ्रम का निरसन हो गया। यह बात किसी को कहने की नहीं है, यह तो अनुभव प्रमाणित है।

इन पंक्तियों को लिखने के बाद इन्होंने रामानंदस्वामी की पादुका ग्रहण की और जब महाराज स्नान करके आये तब अत्यंत आग्रह से उनको पहनाई और जिस गद्दी और तकिये पर रामानंदस्वामी बैठते थे उस पर महाराज के बहुत मना करने पर भी उन्हें आग्रहपूर्वक बिठा दिये। महाराज को प्रकट पुरुषोत्तम मान कर चंदन पुष्पादि से

विधिवत् पूजन किया, स्वरचित आरती* 'जय सद्‌गुरु स्वामी' गाई, साष्टांग दंडवत प्रणिपात किया और खुद को जो दर्शन हुआ था उस अनुभव का सभा समक्ष वर्णन किया। महाराज भी मुक्तानंदस्वामी की यह भक्ति देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो गये। बाद में तो स्वंय मुक्तानंदस्वामी के वचन और स्पर्श से अनेक जीवों को समाधि हो जाती थी। इस प्रकार मुक्तानंदस्वामी की भ्रान्ति नष्ट हुई, महाराज के असली स्वरुप का उनको परिचय हुआ और उन्होंने पहचान लिया कि महाराज स्वयं भगवान हैं। इसके बाद हमेशा अपना आग्रह छोड़कर महाराज के आदेशानुसार व्यवहार किया। मू.अ.मू. गुणातीतानंदस्वामी के शब्दों में–'ऐसा किसी और से नहीं हो सकता है।'

इसके बाद सहजानंदस्वामी ने मांगरोल में बावड़ी का पूर्णकर्म और विष्णुयाग करवाया उस समय महाराज की दिव्यमूर्ति ने उपस्थित सहस्त्रावधि ब्राह्मणों को, गढ्डा के एभलखाचर को, पीपलाणा के नरसिंह महेता को और अन्य अनेक भक्तों को विष्णुरुप में दर्शन दिया। इसके अतिरिक्त जैसे श्रीकृष्ण जी के जीवन की एक कहानी है कि–जब ब्रह्मा गोपाल, गौएं और बछड़े को हरण कर गये थे तब श्रीकृष्ण जी ने अपनी योगमाया से नये गोपाल, गौएं और बछड़े का सर्जन कर दिखाया था इसी प्रकार सहजानंदस्वामी जी के जीवन में भी योगमाया के द्वारा अपने दो रूप दिखाने के प्रसंग आये थे। एक बार बात ऐसी बनी की 'आखा' और 'पीपलाणा' दोनों गांव के लोग चाहते थे कि महाराज हमारे गांव में छः माह तक रहें। दोनों गांव के हरिभक्तों के प्रेमवश होकर महाराज ने दो रूप लिये और दोनों गांवों में एक साथ छः मास रहे और भक्तजनों को आनंदित किया। 'पीपलाणा' के लोग 'आखा' में आते-जाते रहते थे और 'आखा' के लोग 'पीपलाणा' में आते जाते रहते थे और दोनों स्थान पर एक साथ रहने की उनकी दिव्यशक्ति और परमेश्‍वर्य से प्रभान्वित होते रहते थे। यह लीला छः माह तक लगातार चली।

जूनागढ़ के नागर ब्राह्मण हाटकेश्‍वर महादेव को अपने इष्टदेव के रूप में मानते थे। उनको महाराज ने शंकर स्वरूप में दर्शन दिया था। दामोदर (विष्णु) के मंदिर के पुजारी को दामोदर के रूप में और गिरनार पर्वत की दत्तात्रेय की चोटी पर तपस्या करने वाले तपस्वी को उनकी इच्छा से दत्तात्रेय रूप में दर्शन दिये थे। जैनियों को उनके तीर्थंकर के रूप में महाराज का दर्शन होता था। इस प्रकार जिन-जिनके जो ईष्टदेव थे उन-उनको अपने ईष्ट के रूप में ही दर्शन करवा कर महाराज ने अपने दिव्य प्रताप दिखाये थे।

इस प्रकार संस्कारी मुमुक्षुगण एवं हठी और जड़वादी होते हुए भी भीतर से संस्कार सम्पन्न मुमुक्षुओं को महाराज ने अपने दिव्य ऐश्‍वर्य से और कृपासमाधि द्वारा अपने स्वरूप में आकर्षित किये, जागृत किये, उनकी वृत्तियां संसार के नश्‍वर पदार्थों से अलग करके माया के प्रवाह से विमुख बनवाकर इनको ईश्‍वर की ओर उन्मुख किये।

हालांकि इस समाधिप्रकरण के कारण अनेकों ने महाराज को जादूगर मान लिया, किन्तु श्रीजी महाराज का उद्देश्य इतना ही था कि उनके संबंध में आने वाले को प्रथम ही दृढ़ निश्‍चय हो जाये कि–मानवस्वरूप में यह अलौकिक मूर्ति है, दिव्यमूर्ति है, निर्गुणमूर्ति है, मायातीत है, अनादि अवतार पुरुष है। ऐसे तो मानवस्वरूप में रामचेतना आई और कृष्ण चेतना भी आई, किन्तु उस समय उनका सही परिचय 5-10 से अधिक को नहीं हुआ था। इनकी दिव्यता का अंदाजा भी किसी को नहीं हुआ था। इस कमी की पूर्ति करने के लिए और लक्षावधि मनुष्यों के हृदय में अपने प्रति-प्रीति जागृत हो और मनुष्यभाव-मायिकभाव न रहे तथा दिव्यभाव दृढ़ हो इस लिये यह समाधिप्रकरण चलाया था। महाराज को तो चमत्कार में रस ही नहीं था। इन्होंने तो ब्रह्मस्वरूप होकर भगवान में जुड़ने का एकांतिक धर्म का प्रवर्तन किया। इनके उपदेश में भी ज्ञानसमाधि पर ही अत्यधिक वजन है। अतः सत्संग प्रारम्भ होने के बाद गुणातीत संत का प्रसंग इन्होंने अनिवार्य कहा और मनवाया। इसीलिए तो संतों और सिद्धपुरुषों को आज्ञा दी थी कि प्रतिवर्ष एक बार मू.अ.मू. गुणातीतानंदस्वामी का समागम अवश्य करें। अक्षरपुरुषोत्तम का यह रहस्यज्ञान है जिसे ब्रह्मस्वरूप स्वामी श्री शास्त्रीजी महाराज और गुरुहरि योगीजी महाराज ने प्रतिपादित किया है।

– क्रमशः

❋ ❋ ❋

*** आज भी स्वामिनारायण के मंदिरों में और हरिभक्तों के घर पर पूजा के समय यह आरती गाई जाती है।**

नूतनवर्ष के दिव्याशीष......

भगवत्स्वरूप प.पू. काकाजी प्रायः कहते रहते हैं– 'अखंड अक्षरधाम में रहना–भगवत्स्वरूप संत की स्मृति में सर्वदा रहना यही है हमारा नया वर्षारम्भ।' अखण्ड अक्षरधाम में रहने का अर्थ है–उद्वेग विहीन जीवन का प्रारम्भ और अंततोगत्वा भगवत्स्वरूप संत के साथ रसैक्य।

ऐसे दिव्यजीवन की उपलब्धि स्वकीय पुरषार्थ द्वारा संभवित नहीं है। यह संभवित है असाधारण महापुरुष की आंतरिक प्रसन्नता के फलस्वरूप। दुःख किसी को भी अच्छा नहीं लगता है। अपना दिल निरंतर जलता रहे ऐसी इच्छा किसी को नहीं होती है। किन्तु वस्तुस्थिति यही है। यदि इस परिस्थिति से मुक्त होने की चाह है तो जीवन में संपूर्णतया दिव्यपुरुषों को अपनाना पड़ेगा। उनकी पहचान यही अक्षरधाम है। ऐसे दिव्यपुरुष के साथ संबंध बनाने के लिए आपके सम्मुख आज दो-तीन बातें रखता हूँ......

(1) भगवत्स्वरूप संतपुरुष सब के प्राणपुरुष हैं। वे जड़ और चेतन सृष्टि के नियामक हैं। इनके कारण समग्र ब्रह्मांड सचेतन है। लौकिक और पारलौकिक सुख, शांति, और आनंद उन की वजह से है। अतः हमें अपनी बुद्धि में एक आस्था प्रतीतिपूर्वक दृढ़ करनी पड़ेगी कि हमारा जो कुछ है–बल, बुद्धि, शक्ति, निपुणता ये सब– उनकी महती कृपा के कारण है। जुगनु सूर्यनारायण की कल्पना नहीं कर सकता, वामन विराट का वर्णन नहीं कर सकता, जल की लहर समुद्र की गहराई नाप नहीं सकती ठीक उसी प्रकार सत्त्व, रजस् और तमस् इन तीन गुणों से अंध जीवात्मा गुणातीत पुरुष की कल्पना नहीं कर सकता। अतः ऐसे दिव्यपुरुष के संबंध में आने वाले जीव प्रारम्भ में अपनी वैयक्तिक सीमा को पहचान लें यह वांछनीय है। 'मैं अज्ञानी हूं, अबोध हूं, पामर शिशु हूं, प्रभु–मैं तेरी गौ हूं; मैं सामान्य हूं और तू?–तू अति असमान्य है'–यह भाव सत्संग के प्रारम्भ में ही दृढ़ हो जाना चाहिए।

अक्षरधाम के दिव्यपुरुष पृथ्वी पर नहीं हो सकते। उनकी सर्वोपरिता और उनके गुणातीत समाज की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। श्रीजी महाराज ने मुक्तानंद स्वामी को कहा था–'हे मुक्तानंदस्वमी, अक्षरधाम के मुक्तों को जो सबंध है, ठीक वही संबंध आपका है;' अवांतर तेतीस कोटि देवताओं को यह दर्शन नहीं है। गुरुहरि योगीजी महाराज भी कहते थे–'हमारे अलावा अन्य किसी को सौभाग्यशाली मानना यह बड़ी भारी भूल है।' संत परिचय का अर्थ यह ही है कि 'मैं तेरा शिशु' यह भावना निरंतर रहे, 'मैं कितना भाग्यवान कि मुझे ऐसे संत मिले–मेरा जीवन धन्य हो गया' ऐसा भाव अखंड रहे। ऐसे एक संबंध से हमें प्रारम्भ करना है। हमारी केवल ऐसी इच्छा भी होगी तो इसे दृढ़ता में वह महापुरुष स्वयं पलट देंगे।

(2) भगवान के प्रत्यक्ष स्वरूप के संबंध में आने के बाद वचनामृत प्रथम प्रकरण-37 के अनुसार प्रगट की निष्ठा दृढ़ होते ही सेवक काल, कर्म और माया के दुन्यवी कानून से मुक्त हो जाता है। सेवक की प्रतिपल कैसे जगानी वह संत स्वयं निश्चित करते हैं। सेवक की बागडोर महापुरुष अपने हाथ में ले लेते हैं। संत की इच्छा ही सेवक का प्रारब्ध बन जाता है। अतः सेवक के जीवन में–

– जब व्यावहारिक आपत्ति हो,
– जब जीवन सुख दुःख के ज्वार-भाटे में डोलायमान हो,
– जब प्रकृति के तूफान उठे,
– जब देह भयंकर रोग से पीड़ित हो।

तब सेवक को तो 'तू ही तू ही' करना चाहिए। ऐसे संत के एकमात्र आधार और आकार से जीवन यापन करेंगे तो निश्चित स्थिरता आयेगी और हृदय में शांति रहेगी। किन्तु यदि–

– अन्य आकार-आधार स्वीकारेंगे,
– अन्य के प्रति दोषारोपण करेंगे,
– संत का विश्वास छोड़ कर अपने मन के सहारे चलेंगे,
– अपने भाग्य की निन्दा करेंगे,
– विधि की वक्रता का दोष निकालेंगे।

तो ये सब उलझनों की परम्परा को मन से हमारा आमंत्रण ही है।

– संत समागम में रहते हुए भी
– भूत की स्मृति और भविष्य की चिंता
– स्वामी हमारी प्रार्थना सुनते होंगे की नहीं,

– हमारी रक्षा करेंगे की नहीं,
– अब कोई परिणाम आयेगा की नहीं,

ऐसे विचार अवश्य आयेंगे-आने वाले ही हैं, क्योंकि मन का स्वधर्म है-तर्क-विर्तक, शंका-आशंका करके अपने आपको दुःखी बनाना। किन्तु जब यह विश्वास दृढ़ होगा कि मेरे स्वामी की इच्छा के विरुद्ध एक पत्ता भी नहीं हिल सकता और दास के दुश्मन हरि कभी नहीं हो सकते, वे जो करते हैं वह ठीक ही करते हैं–तब हृदय में अखंड शांति की स्थापना होगी। संत जब–

– हमारी देहासक्ति तोड़ें,
– हमारी संसारासक्ति नष्ट करें,
– हमारी मांग सुने ही नहीं,
– हमें अपनी इच्छानुसार न चलने दें,
– हमारी इच्छाओं की उपेक्षा करें और अपनी इच्छानुसार हमारे द्वारा कार्य करवाते रहें,
– सेवा हमने की हो और प्रशंसा दूसरों की करें,
– हम निर्दोष हों फिर भी हमें डांटते रहें,
– हम सच्चे हैं तब भी दूसरों द्वारा जान-बूझकर हमारा अपमान करवायें,

तब भी जो सेवक अखंड दिव्यभाव सहित संत के प्रति अच्युत अनन्य निष्ठा रखे तब ही जानना चाहिए कि सेवक ने संत से सच्ची प्रीति और सच्चा सत्संग किया।

प.पू. काकाजी और प.पू. पप्पाजी पर क्या-क्या विपत्ति नहीं आई, किन्तु उन्होंने 'स्वामी-स्वामी' यह ही भजन किया। स्वामी का ही आकार–उनका ही आधार सहारा लिया। अतः स्थिरता अखण्ड रही, चिंता स्पर्श ही नहीं कर पाई, हृदय में उद्वेग व्याप्त नहीं हुआ, मुख पर से हास्य कभी गया नहीं.. और गुरुहरि की प्रसन्नता का पात्र बन गये। हर गुणातीत विभूति ने अपने जीवन द्वारा यह ही दर्शन करवाया है।

(3) तीसरी बात–जैसे नाम, जात, नात, परिवार देह आदि का जागृत स्वप्न, सुषुप्ति और तुर्यावस्था में अखण्डित अनुसंधान रहता है, संबंध रहता है, योग रहता है ऐसा अनुसंधान प्रत्यक्ष भगवत्सवरूप संत का रहे या उनके ही आधार और आकार में हम खो जायें, पल-पल 'तू ही तू ही' करते रहें तो संत की प्रसन्नता का पात्र बन पायेंगे। भूत की स्मृति और भविष्य की कल्पना उड़ जायेगी। अखण्ड वर्तमान में–अक्षरधाम के दिव्यानंद में मदमस्त रहेंगे।

तो, नूतनवर्ष की उषा प्रारम्भ हो इसके साथ-साथ हम इसके पूर्व के अंधेरे को समझ लें–जांच लें। जीवन का जमा-उधार अंतर्दृष्टि से देख ले, सब प्रकार के द्वन्द्वों से मुक्त हो जायें और प्रभुमय जीवन की नई जमाबही प्रारम्भ करें।

भगवत्स्वरूप संत हमें माफी देने ही आये हैं..... यदि हम इनके साथ अंतराय हीन संबंध जोड़ेंगे तो हमें सब प्रकार से सुखी करने की जिम्मेदारी वे निभायेंगे इस बात में तनिक भी शंका को स्थान नहीं है।

– हमारी भूल होने वाली ही है,
– अपने मन की इच्छानुसार चलने की हमें इच्छा होने वाली ही है,
– पंचविषय हमें सुखकारी लगने वाले ही हैं,
– मन के सहवास में कभी गम में कभी आनंद में हम मग्न होने वाले ही हैं,
– दंभ, गर्व, बनावट, दिखावा में हमें आनंद आने वाला ही है,

किन्तु जैसे-जैसे संत को जीवन में अपनाते जायेंगे, वैसे निश्चित सुखी होने वाले ही हैं। हमारे से उनकी जिम्मेदारी कहीं अधिक है, हमारी चिन्ता हम से उनको अधिक है.... अतः आनंद में रहना... भजन करना।

गुरुहरि सबको सुख ही प्रदान करें यह ही प्रार्थना है।

साधु हरिप्रसाददास के नूतनवर्ष के
सबको अधिकाधिक हार्दिक
– जयश्री स्वामिनारायण

❋ ❋ ❋

If, for the realization of one's spiritual aim, it is necessary to give up the ordinary life of the ignorance, it must be done; the claim of the ordinary life can not stand against that of the spirit.

-Shri Aurobindo.

❖❖❖

दुनिया की सबसे बड़ी आपत्ति यह है कि मूर्खलोग झूठे आत्मविश्वास से कभी हटते नहीं और बुद्धिमानों को अपनी शंका-आशंकाओं से फुरसत नहीं मिलती।

-बर्ट्रांण्ड रसेल

New Year's Divine Message

New year is a day of new awakening, added enthusiasm with renewed power and sharing the joys together with the family members and friends. It's a day of delightment and these days generally differ according to culture, geographical positions and technological developments. The nature, the environment and their inherent culture-all these elements play the part for living day to day life with joys and sorrows, with light and darkness. But the new year is the day of enlightment, enjoyment and sharing our affections in common with others. Christians, Mohammedans, Hindus have different new year marked with particular rituals, formalities and conventions, but all have in common one this – that is a day of new inspiration with loving affections and all celebrate it in their own groups with added enthusiasm and delightment, putting on nice dresses and distributing sweets and getting the most delicate pleasures on this day. However, for us it should be a day of inspiration with the introspection of the previous year's workings, thus taking the fullest account of our activities that may have been inspired by God or our Sadguru. Wherever we have erred, fallen, shaken or tempted by sensual pleasures, we should introspect ourselves, analyse these inner workings of our mind, Chitta, intellect and ego sense and honestly visualize and observe how far we have lived according to the will and desire of our deity or God or Sadguru and adjust and improve ourselves for a higher and better blissful life.

Life has been given as a boon to us and struggle is also inherent in our working in this universe and also for spiritual attainment or development. But if we have guidance or the path finder with us, then the road or our goal of self-realisation and supreme realization is easily achieved and attained with supreme understanding.. No useful purpose is served in the concentration of future goals of realizations after death, when we cannot live it in this very life. Therefore, it is most essential to seek the eternal bliss and our union with the ultimate Reality or Sacchidanand Brahman* as our ultimate goal or final emancipation instead all other goals or ideals of human beings.

*Name of Brahman with attributes of existence consciousness - Bliss.

Human beings, in any case, even after innumerable births, as Lord Swaminarayan said in Vachnamrita 21st of Gadhada middle section—either you understand today this eternal truth or after million of years—will have to transcend the crude nature and become divine by the union with the supramenal divinity and thus become one with God or the ultimate reality or the eternal truth and have true identification with the divine nature, with the divine power and have also the equivalence with God-with His attributes, qualities and powers, so to be Brahma Swaroopa* with divine consciousness and divine qualities like love, compassion, humbleness, thus transcending fear, sex, security and ego sense.

All the spiritual masters of world may differ in their methods and means but the basis and the goal remains the same i.e. all aspects of our life and all multifarious activities must have inevitably the spiritual basis with the ultimate goal of knowing and realizing our real Being and the Supramental Being. Then and then only human beings will be able to enjoy this life in its real sense, in the right direction and liberate themselves and attain ultimate with the Brahmic consciousness or Purna Yoga.

May God inspire us with this new vision on this most auspicious Newyear day of fulfilling our mission as may have been fixed by Almighty for us and develop the co-operative, co-existance spirity by sharing our affections and love amongst our fellow-men, thus serving God with whatever is best with us. 'Suhridbhav' or the friendliness and loveliness is the essence of spiritualism. Let us all determine or make that 'samkalpa' to lead a simple, contented and holy life. Rightnow, therefore, let us make a humble beginning with this first step of introspection and inspiration from God. If our first step is correct in the right direction, that will be our last step for attaining the unattainable in this very life. Otherwise people will perish without such vision and they will be counted as living dead-bodies. We die in order to live such a holy life. 'Tamaso Ma Jyotirgamaya'–we end with this prayer–'O' God! Lead us to the divine life. We are your innocent children. May your Almighty power lead us, guide us and inspire us and give us enough strength, so that with this new added enthusiasm, vigour, vitality and power, irrenspective of our likings, beliefs, thinkings and conviction we can fulfil your will and mission destined for us.

OM SHANTI SHANTI SHANTI

*The soul that has attained equivalence and identification with Brahman.

❖ The scriptures serve to indicate the existence of the Higher Power and to point the way to it. That is their essential purpose. Apart from that they are useless.

– Shri Raman Maharshi

❖ When a man says that he loves God but does not love his fellowmen, he is a liar.

– Jesus Christ

❖ Having come to the saint you are still not elevated, it means 'Darshan' has not taken place.

– Swami Ramdas

❖ All the activities of men ordinarily lead to the continuance of the cycle of birth and death. But the very same actions if put in the services of God and His devotees lose their binding character and thus help to attain liberation……

…..The power of this company of the Realised soul or Satpurush is such that if one does such 'Satsang' with open mind, word and deed and without any sort of deceit and thinks and retains the Lord's sermons in the heart, then the evil thoughts arising out of the quality or Rajas or Rajsic mode of nature are removed by the power of the company of Satpurush. Thus, the power of such satsang is indeed very great and no other means can at all be compared with it.

– Lord Swaminarayan

❖ To those who worship me alone thinking of no other, to such devotees who are ever united with me in contemplation I bring full security, fulfilling all their wants and taking care of them.

– Lord Krishna

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	19.11.77	शनिवार	नवमी, श्री स्वामिनारायण जयंती
2.	दि.	21.11.77	सोमवार	प्रबोधिनी एकादशी उपवास, तुलसी विवाह
3.	दि.	7.12.77	बुधवार	उत्पन्ना एकादशी
4.	दि.	15.12.77	गुरुवार	धनुर्मास प्रारम्भ
5.	दि.	18.12.77	रविवार	नवमी, श्रीस्वामिनारायण जयंती
6.	दि.	21.12.77	बुधवार	मोक्षदा एकादशी व्रत
7.	दि.	1.1.78	रविवार	सन् 1978 ईस्वी प्रारम्भ
8.	दि.	5.1.78	गुरुवार	सफला एकादशी
9.	दि.	13.1.78	शुक्रवार	धनुर्मास समाप्ति
10.	दि.	14.1.78	शनिवार	मकर संक्रांति

साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदास जी द्वारा योगी डिवाईन सोसाईटी,
ए-103, अशोक विहार-III, दिल्ली-110052 फोनः 518838
मुद्रण स्थानः ठक्कर प्रिटिंग प्रेस, 2588, बस्ती पंजाबियान, सब्जी मण्डी, दिल्ली-110777